eISSN 2581-8996
ONLINE
THE INTERNATIONAL JOURNAL OF ADVANCED RESEARCH IN MULTIDISCIPLINARY SCIENCES (IJARMS)
A BI-ANNUAL, OPEN ACCESS, PEER REVIEWED (REFEREED) JOURNAL
Vol. 06, Issue 02, July 2023

न्यायिक जवाबदेही और भारतीय लोकतन्त्रः एक कसौटी

[1]सोना धनगर, [2]प्रो0 (डॉ0) सुभाष चन्द्र गुप्ता, [3]डॉ0 राम प्रकाश
[1]शोधार्थी, विधि विभाग बी0जी0आर0 परिसर पौड़ी, हे0न0ब0ग0 वि0वि0 श्रीनगर गढ़वाल, उत्तराखण्ड।
[2]प्रो0 विधि विभाग बी0जी0आर0 परिसर पौड़ी, हे0न0ब0ग0 विश्वविद्यालय श्रीनगर गढ़वाल, उत्तराखण्ड।
[3]असि0 प्रोफेसर विधि विभाग, बी0जी0आर0 परिसर पौड़ी, हे0न0ब0ग0 वि0वि0 श्रीनगर गढ़वाल।

Received: 20 June 2023 Accepted: 28 June 2023, Published with Peer Reviewed on line: 31 July 2023

Abstract

एक समय था जब यह सोचा जाता था कि न्यायपालिका से संबंधित मुख्य मुद्दे जैसे– न्यायपालिका की स्वतन्त्रता, उसका कार्यपालिका से पृथक होना, नियुक्ति प्रक्रिया और निश्चित रूप से प्रदर्शन और अखंडता के प्रश्न थे। इसमें कोई संदेह नहीं है कि ये मामले वर्तमान में भी जारी हैं, किन्तु न्यायपालिका में हाल ही में हुए परिवर्तन को नजरअंदाज भी नहीं किया जा सकता है।

लोकतन्त्र, जैसा कि हमारे संविधान की उद्देशिका घोषित करती है, कि अंततः राजनीतिक संप्रभुता देश के लोगों में निहित है। यह सम्प्रभुता सामाजिक वास्तविकता और गतिशील व्यवहार्यता तभी प्राप्त करती है जब संवैधानिक साधन सम्प्रभु लोगों की व्यापक निगरानी के प्रति मौन रूप से समर्पित हो जाता है। बड़े पैमाने पर लोग स्पष्ट रूप से निगरानी, नियंत्रण या अनुशासनात्मक कार्य नहीं कर सकते हैं। इसलिए, हमें जांच और संतुलन की आवश्यकता है ताकि कहीं भी निहित शक्ति खराब न हो और संवैधानिक बुनियादी सिद्धान्तों के प्रति उत्तरदायी हों और उन लोगों के प्रति जवाबदेह हो जो शक्ति के अंतिम स्वामी या दाता हैं। सत्ता और जनता के बीच के इस गठजोड़ की एक निश्चित द्वंद्वात्मकता है। समय के साथ, प्राधिकार की सत्तावादी, भ्रष्ठ या पक्षपातपूर्ण बनने की प्रवृत्ति के बीच एक विरोधाभास होना तय है, और इस प्रवृत्ति को लोकप्रिय निरक्षरता और जनता और यहां तक कि सत्ता के शीर्षों से अभिभूत उन वर्गों की नम्र विनम्रता के सिंड्रोम द्वारा बढ़ाया जा सकता है। विरोधाभास का दूसरा पक्ष प्रशासनिक आतंकवाद से प्रेरित असंतोष विरोध, हिंसा और एन्ट्रापी के अन्य रूपों का अपरिहार्य विस्फोट, बेरोकटोक मोहभंग और न्याय के रूप में छिपा हुआ अन्याय है। यदि व्यवस्था की प्रक्रिया को कानून और न्याय प्रदान करने वाली संरचनाओं द्वारा कार्यात्मक रूप से सुनिश्चित नहीं किया जाता है तो निश्चित रूप से अराजकता व्याप्त हो जाएगी। यदि इस टकराव को अदालत और न्यायाधीश के प्रति विस्फोटक प्रतिरोध में नहीं बदलना है, तो लाभार्थियों, यानी भारतीय लोगों के लिए न्यायिक शक्ति का एक नया तालमेल, संचार और जावाबदेही तैयार की जानी चाहिए।

मुख्य शब्दावली– भारतीय न्यायिक प्रणाली, स्वतन्त्र न्यायपालिका, न्यायपालिका की जवाबदेह और भारतीय लोकतन्त्र।

eISSN 2581-8996
ONLINE
THE INTERNATIONAL JOURNAL OF ADVANCED RESEARCH IN MULTIDISCIPLINARY SCIENCES (IJARMS)
A BI-ANNUAL, OPEN ACCESS, PEER REVIEWED (REFEREED) JOURNAL
Vol. 06, Issue 02, July 2023

Introduction

भारतीय न्यायिक अनुभव अद्वितीय हैं। प्रथम अर्थ में, 1950 से 1973 तक सर्वोच्च न्यायालय के पहले दो दशकों में न्यायिक जवाबदेही बहुत सवालों के घेरे में थी। सम्पत्ति, कृषि और आर्थिक सुधार पर सर्वोच्च न्यायालय सहानुभूतिहीन था, और कभी कभी ऐसे मामलों पर अपने कानून के प्रति शत्रुतापूर्ण होता है। हालॉकि, 1973 के बाद न्यायपालिका द्वारा अपनी दिशा बदलने जैसी कोई समस्या नहीं रहीं अब इसकी चिंताएँ मानावाधिकारों और नागरिकों के नागरिक अधिकारों और सामुदायिक अधिकारों पर अधिक थीं। आज, सर्वोच्च न्यायपालिका[4] में नियुक्तियों की पद्धति और सर्वोच्च न्यायालय को हटाने सहित किसी भी अनुशासनात्मक नियंत्रण की अनुपस्थिति जवाबदेही की समस्या पैदा करती है।[5] किसी उच्च न्यायालय के न्यायाधीश को ऐसे विचलित आचरण के लिए अनुशासित करने की कोई विधि नहीं है जो कदाचार की श्रेणी में आता हो। इसके अलावा, सर्वोच्च न्यायालय द्वारा न्यायालय की अवमानना के कानून के स्पष्ट सुधार के अभाव में, न्यायालय को बदनाम करने का मौजूदा कानून किसी न्यायाधीश की उसके आचरण के लिए आलोचना करने के लिए एक निवारक के रूप में कार्य करता है।

जनवरी 2000 में इसकी स्वर्ण जयंती पर पूर्व राष्ट्रपति श्री के0आर0 नारायण ने कहाः **"यह कहना अतिश्योक्ति नहीं होगी कि सर्वोच्च न्यायालय को जिस प्रकार का सम्मान और जनता का विश्वास प्राप्त है, वह देश के कई अन्य संस्थानों से मेल नहीं खाता है।"**

लार्ड ब्राइस का यह कथन कि अमेरिका में हर राजनीतिक प्रश्न देर–सबेर कानूनी प्रश्न बन जाता है, भारत में भी लागू होता है। भारतीय सर्वोच्च न्यायालय किसी राजनीतिक प्रश्न को टालने के सिद्धान्त के खिलाफ नहीं है और उसने कभी भी अपनी शक्तियों का प्रयोग करने से केवल इसलिए इनकार नहीं किया है क्योंकि किसी कानूनी प्रश्न के राजनीतिक निहितार्थ हैं।[6]

आपसी टकराव का दौरः

आज सर्वोच्च न्यायालय द्वारा जो अपनी स्थिति और विश्वास प्राप्त किया है यह स्थिति 1950 और 1973 के बीच के विपरीत है, जिसके दौरान अदालतें अपनी शक्तियों और अधिकार को लेकर बार–बार कार्यपालिका के साथ टकराव में आती थीं। वर्ष 1967 में सम्पत्ति के एक मामले में सुप्रीम कोर्ट ने 6:5 के बहुमत से न्यायाधीशों ने माना कि संसद के पास किसी भी मौलिक अधिकार में संशोधन करने की शक्ति नहीं है।[7]

1970 में, सर्वोच्च न्यायालय ने संशोधित अनुच्छेद 31 की व्याख्या पर बैंक राष्ट्रीयकरण अधिनियम 1969 को अमान्य कर दिया। राज्य द्वारा अर्जित सम्पत्ति के लिए मुआवजे की राशि की औचित्यता से बचने के लिए संसद द्वारा जानबूझकर संविधान के अनुच्छेद 31 को तैयार किया गया।[8] केशवानन्द भारती[9] मामला

[4] Reference to the case of Justice Ashwini Kumar Mata
[5] Reference to the case of Justice Soumitra Sen
[6] State of Rajasthan v. Union of India (1978) 1 SCR 1.
[7] Golak Nath IC v. Punjab AIR (1967) SC 1643.
[8] R.C.Cooper v. UOI (1970) 3 SCR 530.
[9] AIR 1973 SC 1461.

eISSN 2581-8996
ONLINE
THE INTERNATIONAL JOURNAL OF ADVANCED RESEARCH IN MULTIDISCIPLINARY SCIENCES (IJARMS)
A BI-ANNUAL, OPEN ACCESS, PEER REVIEWED (REFEREED) JOURNAL
Vol. 06, Issue 02, July 2023

भारत के संवैधानिक इतिहास में एक निर्णायक क्षण है। सर्वोच्च न्यायालय ने माना कि संसद अपनी संवैधानिक शक्तियों का प्रयोग करते हुए संविधान के **"आधारभूत ढ़ॉचे"** को नुकसान या नष्ट नहीं कर सकती हैं 1973 में 7:6 के बहुमत से दिया गया यह निर्णय अत्यधिक विवादास्पद था और न्यायिक सिद्धान्त के रूप में वर्तमान तक बना रहेगा। 1967 के फैसले के बाद से, सर्वोच्च न्यायालय ने संविधान में कई संशोधनों को अमान्य कर दिया है, जो उसकी राय में संविधान के **आधारभूत ढ़ॉचे का सिद्धान्त** का उल्लंघन करते हैं। राज्य की बहुसंख्यक घटक शक्ति को नियंत्रित करने के लिए एक निर्माणक अवधारणा का महत्व दुनिया के किसी भी न्यायालय की सबसे शानदार उपलब्धि होनी चाहिए। बांग्लादेश को छोड़कर दुनिया की किसी अन्य न्यायपालिका ने ऐसी शक्ति का दावा नहीं किया है।

"विधि के स्वतन्त्र संरक्षण के रूप में, न्यायाधीश जिम्मेदारी का प्रत्यक्ष और व्यक्तिगत बोझ उठाते हैं जो उनके कार्यालय को अकेला और कठिन बना देता है। हम भाग्यशाली हैं कि हमारे न्यायाधीश अपने पूर्ववर्तियों की महान परम्परा के योग्य उत्तराधिकारी हैं।"[10]

विधि की सबसे कुख्यात कल्पना यह है कि न्यायाधीश कानून नहीं बनाते बल्कि उसकी व्याख्या एवं उसे लागू करने का कार्य करते हैं। न्यायाधीशों को विधि निर्माता के बजाय व्याख्याकार के रूप में चित्रित किया गया है। इस पर सबसे प्रसिद्ध विवाद लॉर्ड डेनिंग और हाउस ऑफ लॉर्ड्स के बीच था कि क्या न्यायाधीश विधायिका द्वारा छोड़े गए अन्तराल को भर सकते हैं। हाउस ऑफ लॉर्ड्स ने सोचा कि वे ऐसा नहीं कर सकते।[11] हालॉकि डेनिंग[12] को दिए गए समर्थन के बावजूद, यह स्पष्ट नहीं है कि इस अन्तराल को भरने के कार्य की सीमा क्या है। **जै0 ओलिवर वेंडेस होम्स** के अनुसार, "न्यायाधीश विधि बनाते हैं लेकिन वे कभी–कभी ऐसा करते हैं।"[13]

न्यायिक जवाबदेही और स्वतन्त्रता के बीच संबंधः

क्या ये परस्पर असंगत मूल्य हमेशा तनाव की स्थिति मे बने रहने के लिए नियत हैं? वैकल्पिक रूप से, क्या जवाबदेही को स्वतन्त्रता के सहसंबंधी दायित्व के रूप में देखा जाना चाहिए, जो एक दूसरे का आवश्यक पूरक है? हो सकता है कि इसका कोई स्पष्ट, और सटीक उत्तर न हो। कुछ दिप्पणीकारों के लिए यहॉ तनाव आवश्य होगा; जबकि दूसरों के लिए यह जरूरी नहीं है। **उदाहरण के लिए,** कनाडाई न्यायपालिका पर 1995 की फ्रीडलैंड रिपोर्ट ने स्वीकार किया कि तनावा मौजूद होना चाहिए, क्योंकि जवाबदेही न्यायाधीशों पर **"अवरोधक"** या **"ठंडा करने वाला"** प्रभाव डाल सकती है।[14] दूसरी ओर, पश्चिमी ऑस्ट्रेलिया के सर्वोच्च न्यायालय के न्यायमूर्ति आर0डीद्ध निकोलसन[15] के लिए, स्वतन्त्रता और जवाबदेही के दो मूल्यों को **"विपरीत के बजाय पूरक के रूप में माना जाना चाहिए",** मोराबिटो द्वारा समर्थित एक

[10] 7 Henry Cecil, "The English Judge", 1970, pg. 170.
[11] Magor and St. Mellons Rural District Council v. Newport Corporation, (1951) 2 All E.R. 839
[12] See Renton Committee, The Preparation of Legislation, 1975, Cmnd. 6053
[13] . South Pacific Co. v. Jensen (1917) 244 U.S. 205
[14] ML Friedland, A Place Apart: Judicial Independence and Accountability in Canada, The Canadian Judicial Council, May 1995, p 129
[15] RD Nicholson, Judicial independence and accountability: can they co-exist? , (1993) 67 ALJ 404 at 414

eISSN 2581-8996
ONLINE
THE INTERNATIONAL JOURNAL OF ADVANCED RESEARCH IN MULTIDISCIPLINARY SCIENCES (IJARMS)
A BI-ANNUAL, OPEN ACCESS, PEER REVIEWED (REFEREED) JOURNAL
Vol. 06, Issue 02, July 2023

दृष्टिकोण जो कहता है कि जवाबदेही की एक उचित प्रणाली होगी। न्यायपालिका के साथ **"सामान्य सामुदायिक संतुष्टि"** बढ़ाकर न्यायिक स्वतन्त्रता बढ़ाना।[16]

इस क्षेत्र के विख्यात टिप्पणीकार **डेविड पैनिक** ने लिखा था:

"न्यायिक स्वतन्त्रता के सिद्धान्त का मूल्य यह है कि यह न्यायाधीश को सरकार या उसके निर्णयों की सामग्री को अस्वीकार करने वाले अन्य लोगों द्वारा लगाए गए बर्खास्तगी या अन्य प्रतिबन्धों से बचाता है। लेकिन न्यायिक स्वतन्त्रा को न्यायिक कदाचार या अक्षमता के लिए ढाल या अराजनीतिक मानदण्डों पर अविवेपूर्ण आचरण के बारे में शिकायतों की जांच में बाधा के रूप में डिजाइन नहीं किया गया था, और बनने की अनुमति भी नहीं दी जानी चाहिए.....वह व्यक्ति जिसके पास एक तर्कपूर्ण मामला है कि एक न्यायाधीश ने अपने नुकसान के लिए भ्रष्ट या दुर्भावनापूर्ण तरीके से कार्य किया है, न्यायाधीश के खिलाफ कार्रवाई का कोई कारण नहीं होना चाहिए, यह बिल्कुल अक्षम्य है।"[17]

भारतीय न्यायपालिका की स्वतन्त्रता:

वर्ष 1977 में, आपातोल हटने के बाद, जो न्यायपालिका की स्वतन्त्रता के लिए एक झटका था और कार्यपालिका द्वारा न्यायिक नियुक्तियों में हस्तक्षेप की पृष्ठभूमि के साथ, सर्वोच्च न्यायालय को अवांछनीय नियुक्तियों और मनमाने हस्तान्त्रणों से न्यायपालिका की स्वतन्त्रता की रक्षा करने के लिए कहा गया था। कार्यकारी न्यायाधीश के तीन मामलों में ऐसा किया गया, जो निम्न प्रकार है–

प्रथम न्यायाधीश का मामला (1981):

1982 में, ***एस0पी0 गुप्ता बनाम यू0ओ0आई***[18] मामले में सुप्रीम कोर्ट की पांच जजों की बेंच ने सुप्रीम कोर्ट और उच्च न्यायालय के न्यायाधीशों की नियुक्ति की पद्धति पर विचार किया था। सर्वोच्च न्यायालय के न्यायाधीशों के संबंध में अनुच्छेद 124(2) और उच्च न्यायालय के न्यायाधीशों के संबंध में अनुच्छेद 217(1) दोनों अनुच्छेदों में उल्लिखित अन्य पदाधिकारियों के बीच **"परामर्श"** के बाद राष्ट्रपति द्वारा नियुक्ति की आवश्यकता होती है। भारत के मुख्य न्यायाधीश सामान्य बोलचाल की भाषा में **"परामर्श"** शब्द का **"सहमति"** नहीं है। संविधान सभा की बहस से पता चलता है कि जब कुछ सदस्यों द्वारा यह सुझाव दिया गया कि परामर्श, तो इस पर सहमति नहीं बनी। वर्तमान मामले में अदालत ने माना कि नियुक्ति की अंतिम शक्ति केन्द्र सरकार के पास है और यह यू0के0, कनाडा और न्यूजीलैंड जैसे अन्य लोकतांत्रिक देशों में प्रचलित संवैधानिक प्रथाओं के अनुसार है। **न्यायमूर्ति भगवती** के माध्यम से बोलते हुए अदालत के बहुमत ने कहा:

"बेशक, यह न्यायाधीशों की नियुक्ति की एक आदर्श प्रणाली नहीं है, लेकिन यही कारण है कि न्यायाधीशों की नियुक्ति की शक्ति कार्यपालिका पर छोड़ दी गई है, जो विधायिका के प्रति उत्तरदायी है, और विधायिका के माध्यम से, यह उन लोगों के प्रति जवाबदेह है जो न्याय के उपभोक्ता न्यायाधीशों की नियुक्ति की शक्ति भारत के मुख्य न्यायाधीश या उच्च न्यायालय के मुख्य न्यायाधीश को नहीं सौंपी गई है क्योंकि उनकी लोगों के प्रति कोई जवाबदेही नहीं है और यदि कोई गलत या अनुचित नियुक्ति की जाती है, तो भी वे इसके लिए उत्तरदायी नहीं हैं। ऐसी नियुक्ति के लिए किसी को भी हिसाब दें।"

[16] V Morabito, The Judicial Officers Act 1986 (NSW): a dangerous precedent or a model to be Followed, (1993) 16 UNSW Law Journal 481 at 490
[17] D Pannick, Judges, Oxford University Press 1987, p 99
[18] (1981) Supp. 1 SCC 574; AIR (1982) SC 149

eISSN 2581-8996
ONLINE
THE INTERNATIONAL JOURNAL OF ADVANCED RESEARCH IN MULTIDISCIPLINARY SCIENCES (IJARMS)
A BI-ANNUAL, OPEN ACCESS, PEER REVIEWED (REFEREED) JOURNAL
Vol. 06, Issue 02, July 2023

दूसरे न्यायाधीश का मामलाः

दस साल बाद 1993 में, सुप्रीम कोर्ट के ***एडवोकेट्स ऑन रिकॉर्ड एसोसिएशन बनाम यूनियन ऑफ इंडिया,***[19] के मामले में उच्चतम न्यायालय ने पहले न्यायाधीश के मामले की शुद्धता पर विचार करने के लिए नौ न्यायाधीशों की एक बड़ी पीठ का गठन किया, जिसने मुख्य न्यायाधीश को दोषी ठहराया था। भारत के न्यायाधीशों को उनकी राय की प्रधानता नहीं थी। बहुमत से, प्रथम न्यायाधीश के मामले को खारिज करते हुए, यह माना गया कि सी0जे0आई0 एक न्यायाधीश के मूल्य तक पहुंचने के लिए सर्वोत्तम रूप से सुसज्जित थे क्योंकि न्यायपालिका पर राजनीतिक प्रभाव को खत्म करना भी आवश्यक था। दूसरे न्यायाधीश के मामले में बहुमत ने पहले न्यायाधीश के न्यायालय के दृष्टिकोण को इस प्रकार खारिज कर दियाः

"इतना आसानी से फूटने वाला मिथक, एक बुलबुना जो छूने मात्र से गायब हो जाता है। वरिष्ठ न्यायाधीशों की नियुक्ति के मामले में जनता के प्रति कार्यपालिका की जवाबदेही मान ली गई है और इसका कोई वास्तविक आधार नहीं है। संविधान के अनुच्छेद 121 और 211 द्वारा लगाए गए प्रतिबंध के कारण विधानमण्डल में किसी भी व्यक्तिगत नियुक्ति की योग्यता पर चर्चा करने का कोई अवसर नहीं है। अनुभव से पता चला है कि यह किसी भी राजनीतिक दल के घोषणा का हिस्सा नहीं है, और यह ऐसा मुद्दा है जिस पर चुनाव अभियान के दौरान बहस की जा सके। इस प्रकार ऐसा कोई तरीका नहीं है जिससे किसी व्यक्तिगत न्यायाधीश की नियुक्ति के मामले में कार्यपालिका की नियुक्ति के मामले में कार्यपालिका की अनुमानित जवाबदेही को उठाया जा सके, या किसी भी समय उठाया गया हो। दूसरी ओर, वास्तविक व्यवहार में, भारत के मुख्य न्यायाधीश और उच्च न्यायालय के मुख्य न्यायाधीश, अदालतों के कामकाज के लिए जिम्मेदार होने के नाते, किसी भी अनुपयुक्त नियुक्ति के परिणाम का सामना करना पड़ता है जो हमेशा की आलोचना को जन्म देता है। वह विवाद मुख्यतः न्यायालयों में उठाया जाता है। इसी प्रकार, सर्वोच्च न्यायालय और उच्च न्यायालयों के न्यायाधीश, जिनकी भागीदारी न्यायालों के कामकाज में मुख्य न्यायाधीश के साथ शामिल होती है और जिनकी राय चयन प्रक्रिया में ध्यान में रखी जाती है, परिणाम भुगतते है और जवाबदेह बन जाते हैं।"

तीसरे न्यायाधीश का मामला

दूसरे न्यायाधीश के मामले ने मुख्य न्यायाधीश और उनके वरिष्ठ सहयोगियों की सामूहिक राय के संबंध में अनिश्चितता का क्षेत्र छोड़ दिया। यह माना गया कि सी0जे0 अपने वरिष्ठ सहयोगियों से परामर्श करेंगे और आम तौर पर, उनकी सिफारिश स्वीकार्य होगी और विवादास्पद नहीं होगी।

हालॉकि, भारत के मुख्य न्यायाधीश पुंछी के आठ महीने के कार्यकाल के दौरान, नियुक्तियों के लिए कई सिफारिशें विवादास्पद पाई गईं और कहा गया कि कानून मंत्रालय मुख्य न्यायाधीश के परामर्श की सीमा की जांच करने का हकदार नहीं था। यह भी आशंका थी कि मुख्य न्यायाधीश द्वारा गठित सर्वोच्च न्यायालय की एक पीठ सरका को उनके द्वारा अनुशंसित न्यायाधीश की नियुक्ति के लिए आदेश जारी कर सकती है। इन परिस्थितियों में, केन्द्र सरकार ने जुलाई 1998 में जल्दबाजी में 143(1) के तहत सर्वोच्च न्यायालय की राय मांगने का निर्णय लिया।[20] न्यायालय ने राय दी कि मुख्य न्यायाधीश को सर्वोच्च न्यायालय के चार वरिष्ठतम न्यायाधीशों के परामर्श से सर्वोच्च न्यायालय के न्यायाधीश की नियुक्ति के लिए सिफारिश करनी चाहिए, और जहां तक उच्च न्यायालय में नियुक्ति का संबंध है, सिफारिश अवश्य की जानी चाहिए।

[19] (1993) 4 SCC 441; AIR (1994) SC 268
[20] (1998) 7 SCC 739

eISSN 2581-8996
ONLINE
THE INTERNATIONAL JOURNAL OF ADVANCED RESEARCH IN MULTIDISCIPLINARY SCIENCES (IJARMS)
A BI-ANNUAL, OPEN ACCESS, PEER REVIEWED (REFEREED) JOURNAL
Vol. 06, Issue 02, July 2023

उच्चतम न्यायालय के वरिष्ठतम न्यायाधीशों के परामर्श से। इसके अलावा, इसमें कहा गया है कि यदि सीजेआई परामर्श प्रक्रिया के मानदण्डों और आवश्यकताओं का पालन किए बिना कोई सिफारिश करता है, तो यह भारत सरकार के लिए बाध्यकारी नहीं होगा।

दूसरे और तीसरे न्यायाधीशों के मामले का प्रभावः

दूसरे और तीसरे न्यायाधीशों के मामलों के निर्णयों ने न्यायाधीशों की नियुक्ति के लिए संविधान के प्रावधानों को बदल दिया है। वे न्यायपालिका की स्वतन्त्रता को सुरक्षित रखने की आड़ में एक टूर डे फोर्स हैं। संविधान सभा की बहसों में सीजेआई को अंतिम नियुक्ति प्राधिकारी न बनाने की संविधान निर्माताओं की स्पष्ट मंशा की अनदेखी की गई है।

सर रॉबिन कुक दूसरे न्यायाधीश के मामले पर मेकिंग द एंजल्स वीप नामक लेख में लिखते हुए उच्चतम न्यायालय द्वारा दी गई व्याख्या पर विनम्र भाषा में अपना आश्चर्य व्यक्त करने से खुद को नहीं रोक सके। वे बताता है किः **"न्यायालय के बहुमत बहुत आगे बढ़ गए होंगे यदि उनके निष्कर्षों को कानून में बाध्यकारी होने के उद्देश्य से संविधान की व्याख्या के रूप में देखा जाए.....हालांकि, विस्तार से कमजोर, यह निश्चित रूप से हमेशा अंतरराष्ट्रीय इतिहास में एक नाटकीय घटना के रूप में देखा जाएगा न्यायशास्त्र सा"**[21]

तीसरे न्यायाधीश के मामले में इसी प्रकार लिखते हुए, एक अन्य लेख "जहां देवदूत चलने से डरते हैं" में, वह कहते हैं कि – यह न्यायिक तर्क–वितर्क की कवायद से ज्यादा नीति की घोषणा जैसा लगता है। तर्क स्पष्ट रूप से सीमित है..... कुल मिलाकर तीसरे न्यायाधीशों के मामले में सर्वोच्च न्यायालय की राय आम कानूनों की दुनिया में सर्वोच्च राष्ट्रीय अपीलीय अदालत द्वारा जारी किया गया अब तक का सबसे उल्लेखनीय निर्णय होना चाहिए।[22]

सर्वोच्च न्यायालय ने बार–बार कहा है कि संविधान के तहत सभी शक्तियॉ सीमित हैं और न्यायिक समीक्षा के अधीन हैं। हालॉकि, वही सीमा भारत के मुख्य न्यायाधीश और कॉलेजियम की गई अर्जित शक्ति पर लागू नहीं होती है, दूसरे न्यायाधीश के मामले में न्यायालय ने घोषणा की थी कि मुख्य न्यायाधीश से पीड़ित किसी भी व्यक्ति द्वारा कोई न्यायिक समीक्षा नहीं की जा सकती है। उदाहरणार्थ– एक न्यायाधीश द्वारा जिसे कॉलेजियम द्वारा एक उच्च न्यायालय से दूसरे उच्च न्यायालय में स्थानांतरित किया जाता हैं। कार्यपालिका, या राजनेताओं को शामिल करना, यदि आप ऐसा कहना चाहें, जो कि इन निर्णयों की नींव है, आवश्यक रूप से एक बुरी बात नहीं होगी, जब तक कि उस समय की कार्यपालिका न्यायपालिका को ऐसे न्यायाधीशों से भरने की कोशिश न करे जो इसके मूल्यों के प्रति वफादार हों और न्यायाधीशों की गुणवत्ता की बलि चढ़ा दी जाती है। जैसा कि न्यायमूर्ति माइकल किर्बी ने कहा है–

"यदि अनुष्ठान संबंधी बातचीत से इन दुरूपयोगों को टाला जाता है, तो जनता के निर्वाचित प्रतिनिधियों का उन वरिष्ठ, योग्य वकीलों में से न्यायाधीशों की नियुक्ति करने का अधिकार, जिनके सामान्य मूल्यों के बारे में उन्हें उम्मीद है कि वे उनके मूल्यों के अनुरूप होंगे, एक ऐसा साधन है जो न्यायिक संस्था की रक्षा करता है एकसमान या एकरंगी सामाजिक मूल्यों से। इंग्लैण्ड से नकल की गई प्रणाली के तहत, सरकार में विधायकों को ही नियुक्ति के मामलों में अंतिम फैसला लेना चाहिए। यह न्यायपालिका को लोकतांत्रिक वैधता का तत्व देता है।"[23]

[21] Robin Cook, J., Making the Angels Weep, Law and Justice Vol. 1, p 109
[22] Robin Cook, J., Supreme But Not Infallible- Essays in Honor of the Supreme Court of India, Oxford 2000, p 97
[23] Modes of Appointment and Training of Judges, A Common Law Perspective CLTL Year Book Vol VIII Jan.2000

eISSN 2581-8996
ONLINE
THE INTERNATIONAL JOURNAL OF ADVANCED RESEARCH IN MULTIDISCIPLINARY SCIENCES (IJARMS)
A BI-ANNUAL, OPEN ACCESS, PEER REVIEWED (REFEREED) JOURNAL
Vol. 06, Issue 02, July 2023

राष्ट्रीय न्यायिक आयोगः

भारत में न्यायिक नियुक्तियों के लिए राष्ट्रीय आयोग की स्थापना के प्रस्ताव कई बार रखे गए हैं। 1987 में विधि आयोग ने न्यायाधीशों की नियुक्तियों के लिए सिफारिशें करने के लिए न्यायाधीशों और अन्य व्यक्तियों के एक व्यापक आधार वाले निकाय की सिफारिश की। 1990 में ऐसे आयोग की स्थापना के लिए एक संवैधानिक संशोधन विधेयक संसद में पेश किया गया था लेकिन यह समाप्त हो गया। भारत सरकार द्वारा गठित संविधान समीक्षा 2002 के राष्ट्रीय आयोग ने कॉलेजियम प्रणाली के विकल्प के रूप में न्यायिक सदस्यों की प्रधानता वाले एक राष्ट्रीय न्यायिक आयोग का समर्थन किया। भारतीय श्रेष्ठ न्यायपालिका के आकार के साथ, भारत में दो न्यायिक आयोगों का होना आवश्यक हो सकता है, एक सर्वोच्च न्यायालय के लिए और दूसरा उच्च न्यायालयों के लिए।[24]

न्यायाधीशों की नियुक्ति और स्थानांतरण में न्यायालय की स्वयं कल्पित भूमिका के प्रति सामान्य असंतोष ने एक राष्ट्रीय न्यायिक आयोग के गठन के सुझावों को जन्म दिया है, जिसमें न केवल न्यायपालिका के सदस्य बल्कि अन्य गैर–न्यायिक सदस्य भी शामिल होंगे, जिन्हें सिफारिशें करनी थी। उच्च न्यायालय और उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीशों की नियुक्ति के लिए। राष्ट्रीय न्यायिक आयोग की आवश्यकता पर प्रतिक्रिया देते हुए, पूर्व मुख्य न्यायाधीश **ए0एस0 आनन्द** ने कहाः

"राष्ट्रपति के संदर्भ में नौ न्यायाधीशों की पीठ का जवाब जो कॉलेजियम द्वारा व्यापक परामर्श प्रदान करता है। इसे अपनी उपयोगिता साबित करने का उचित मौका दिया जाना चाहिए।"[25]

न्यायिक जवाबदेही विधेयकः

न्यायिक मानक और जवाबदेही विधेयक न्यायिक मानक स्थापित करेगा और न्यायाधीशों को उनकी गलतियों के लिए जवाबदेह बनाएगा। इसमें यह भी अनिवार्य होगा कि उच्च न्यायालयों और उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीशों को अपने जीवनसाथी और आश्रितों सहित अपनी संपत्ति और देनदारियों की घोषणा करनी होगी। केंद्रीय मंत्रिमंडल ने न्यायिक मानक और जवाबदेही विधेयक, 2010 के मसौदे को मंजूरी दे दी है जो उच्च न्यायपालिका के सदस्यों के खिलाफ शिकायतों से निपटने के लिए पांच सदस्यीय निरीक्षण समिति गठित करने का प्रावधान करता है। आधिकारिक सूत्रों ने कहा कि न्यायाधीशों को अपनी संपत्ति घोषित करने और सम्पत्ति और अन्य देनदारियों का वार्षिक ब्यौरा दाखिल करने की भी आवश्यकता होगी। ये सभी विवरण सर्वोच्च न्यायालय और उच्च न्यायालयों की वेबसाइटों पर डाले जाएंगे। इसके लिए न्यायाधीशों को विधिक परिषद के किसी सदस्य, विशेषकर उसी अदालत में विधिक अभ्यास करने वाले लोगों के साथ घनिष्ठ संबंध रखने की आवश्यकता न होगी। सूचना और प्रसारण मंत्री अंबिका सोनी ने एक पत्रकार सम्मेलन में संवाददाताओं से कहा, **" विधेयक के अधिनियमन से अधिक पारदर्शिता लाकर उच्च न्यायालय की जवाबदेही सुनिश्चित करने की आवश्यकता के बारे में बढ़ती चिंताओं का समाधान होगा और न्यायपालिका की विश्वसनीयता और स्वतन्त्रता और मजबूत होगी।"** केन्द्रीय मंत्रीमण्डल की बैठक, प्रस्तावित निरीक्षण समिति की अध्यक्षता भारत के पूर्व मुख्य न्यायाधीश करेंगे और इसमें अटॉर्नी जनरल, उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीश, उच्च न्यायालय के मुख्य न्यायाधीश और राष्ट्रपति द्वारा नामित एक प्रतिष्ठित व्यक्ति शामिल होंगे।[26]

[24] http://www.thehindu.com/opinion/op-ed/article66672.ece , as on 5th December 2011.
[25] T.R.Adhyarujina, 'Judicial Accountability: India's methods and Experience', Judges and Judicial Accountability by Cyrus Das, Kaanagasabai Chandra, Commonwealth Law Association,2000, pg.123
[26] http://legalservicesindia.com/article/article/judicial-accountability-in-india-538-1.html as on 9th Dec 2011

eISSN 2581-8996
ONLINE
THE INTERNATIONAL JOURNAL OF ADVANCED RESEARCH IN MULTIDISCIPLINARY SCIENCES (IJARMS)
A BI-ANNUAL, OPEN ACCESS, PEER REVIEWED (REFEREED) JOURNAL
Vol. 06, Issue 02, July 2023

न्यायिक जवाबदेही: अवधारणा और वास्तविकता

इंग्लैंड और पूर्व उपनिवेशों में बदलाव बड़े पैमाने पर प्रशासनिक कानून में जबरदस्त प्रगति के कारण आया है, जिसे लॉर्ड डिप्लॉक ने अपने न्यायिक जीवनकाल में सबसे बड़ा विधिक विकास माना था।[27] न्यायिक समीक्षा की प्रक्रिया अक्सर न्यायपालिका को कार्यपालिका के विरूद्ध खड़ा कर देती है जिसके परिणामस्वरूप न्यायपालिका द्वारा सरकार पर आरोप लगाए जाते हैं।[28]

जनता ने निर्वाचित प्रतिनिधियों द्वारा पारित कानूनों को खारिज करने वाली एक अनिर्वाचित न्यायपालिका के सिद्धान्त को आलोचकों द्वारा अलोकतांत्रिक और बहुसंख्यकवाद के सिद्धान्त का उल्लंघन करने वाला बताया गया था। पारित विधि को रद्द करते समय न्यायाधीशों द्वारा उपयोग की जाने वाली कड़ी भाषा के कारण समस्या निस्संदेह बढ़ गई है। सरकारी कार्रवाई या सरकार द्वारा चुना गया मंत्री। राजनेताओं को यह कहे जाने से नफरत है कि उन्होंने गलत काम किया है और उससे भी अधिक यह कि उन्होंने विधि के विपरीत काम किया है। टाइम्स ऑफ इंडिया में महाराष्ट्र के एक पूर्व मुख्यमंत्री के बारे में बताया गया है:

"देश में कौन चला रहा है सरकार– न्यायालय या मीडिया? ....न्यायाधीशों को न्यायाधीश के रूप में व्यवहार करने दें। उन्हें आपत्तिजनक भाषा का प्रयोग नहीं करना चाहिए, यदि वे ऐसा करेंगे तो उनके साथ सम्मानजनक व्यवहार करना संभव नहीं होगा।"[29]

सरकार में अधिक पारदर्शिता और जवाबदेही के आज के दृष्टिकोण में, न्यायपालिका को उसके प्रदर्शन और उसके सदस्यों के आचरण की जांच से छूट नहीं दी जाएगी। यह अवधारणा कि न्यायपालिका अपनी स्वतन्त्रता के कारण जवाबदेह नहीं हो सकती, अब एक वैध तर्क नहीं है। अनिर्वाचित होने और कार्यकाल की सुरक्षा का आनन्द लेने के बावजूद, यह पारित नहीं हो पाएगा। यह भी संदेह का प्रश्न है कि क्या न्यायाधीशों की ईमानदारी का निष्क्रिय आश्वासन आज के माहौल के अनुरूप होगा। उदाहरण के लिए, राल्स के पूर्व अंग्रेजी मास्टर लॉर्ड डोनाल्डसन कहते हैं:

"न्यायाधीशों का कोई निर्वाचन क्षेत्र नहीं होता और वे अपनी अंतरात्मा और कानून के अलावा किसी के प्रति जवाबदेह नहीं होते।"[30]

न्यायिक जोखिम और जवाबदेही का एक नया सिद्धान्त गणतंत्र के नैतिक अस्तित्व का अभिन्न अंग है: "इसलिए, जिन लोगों को अदालतों में न्याय करना है, उन्हें अपना कार्य कैसे करना है, वे तरीके जिनके द्वारा उन्हें चुना जाना है, वे शर्तें जिन पर वे सत्ता संभालेंगे, ये और उनसे संबंधित समस्याएं हैं राजनीतिक दर्शन का हृदय, जब हम जानते हैं कि एक राष्ट्र–राज्य कैसे न्याय करता है तो हम कुछ सटीकता के साथ उस नैतिक चरित्र के जनते हैं जिसका वह दिखावा कर सकता है।"[31]

न्यायमूर्ति **किर्बी** सही हैं क्योंकि वह न्यायाधीशों के सार्वजनिक तरीके से कार्य करने और तर्कसंगत निर्णयों के माध्यम से अपने निर्णयों के लिए जवाबदेह होने की बात करते हैं। निर्णयों पर टिप्पणी करने और आलोचना करने का अधिकार जवाबदेही प्रक्रिया का एक अनिवार्य हिस्सा है।[32]

[27] The Fleet Street Casuals Case R. v. I.R.C. (1982) AC 617 at 641
[28] Lord Diplock's, The Judicial Control Of Government, (1979) 1 MLJ xxv.
[29] Quoted in Michael Kirby, Judicial Activism(1997) CLB 1224, Oct 1996
[30] Hon. Mr. RD Nicholson J., Judicial Independence and Accountability: can they Co-exist? (1993) 67 ALJ 404
[31] Harold J. Laski, "A Grammer of Politics", pg. 541-42
[32] Cyrus Das, Kanagasabai Chandra, 'Judges and Judicial Accountability', Commonwealth Law Asscociation,2000

eISSN 2581-8996
ONLINE
THE INTERNATIONAL JOURNAL OF ADVANCED RESEARCH IN MULTIDISCIPLINARY SCIENCES (IJARMS)
A BI-ANNUAL, OPEN ACCESS, PEER REVIEWED (REFEREED) JOURNAL
Vol. 06, Issue 02, July 2023

आलोचना और जवाबदेही:

निर्णयों की आलोचना करने वाले पत्रकारों और लेखकों के विरूद्ध न्यायालय की अवमानना के हालिया आदेशों ने भारत में न्यायाधीशों की आलोचना को लेकर व्याप्त तनाव को केन्द्र में ला दिया है। सुश्री अरूंधति रॉय के लिए प्रतीकात्मक सजा सामने है।[33]

न्यायालय की अवमानना अधिनियम 1971 न्यायालय का अपमान करने पर दण्ड देता है। उच्चतम न्यायालय ने एक मामले में कहा कि किसी नागरिक के स्वतन्त्र भाषण और अभिव्यक्ति के मौलिक अधिकार (अनुच्छेद 19) ने न्यायालय को अपमान करने के अपराध को समाप्त नहीं किया हैं।[34]

ऑस्ट्रेलिया के पूर्व मुख्य न्यायाधीश ब्रेनन ने उन सुझावों को खारिज कर दिया कि न्यायपालिका के कर्तव्य मतदाताओं के प्रति समर्पित हैं; वह कहते हैं, "उनका कर्ज़दार विधि है, जो समुदाय में सभी की शांति, व्यवस्था और सुशासन के लिए है।"[35]

उन्होंने ठीक ही स्वीकार किया था कि न्यायाधीशों को विशेष रूप से न्यायिक शक्ति के उपयोग के लिए जवाबदेह होना चाहिए। ऐतिहासिक निर्णय देते समय, लेकिन वास्तविक समस्या जवाबदेह होने की नहीं बल्कि "रिपोर्टिंग और दिए गए विवरण की आलोचनात्मक सराहना" की है।[36]

सर्वोच्च न्यायालय के अवमानना से संबंधित ऐसे निर्णय हैं जो मानते हैं कि किसी अवमाननाकर्ता को अवमानना को उचित ठहराने की अनुमति नहीं दी जा सकती है।

अनुशासनात्मक पहलु:

चूँकि संविधान में प्रावधान है कि सर्वोच्च न्यायालय और उच्च न्यायालयों में न्यायाधीशों की नियुक्ति कार्यपालिका द्वारा की जाएगी, यह उस पद्धति को भी ध्यान मे रख रहा था जिसमें संविधान ने यह भी निर्धारित किया था कि ऐसे न्यायाधीशों को प्रत्येक सदन को संबोधित करने के बाद कार्यपालिका द्वारा पद से हटा दिया जाएगा।

सर्वोच्च न्यायालय के किसी न्यायाधीश को उसके पद से पद से तब तक नहीं हटाया जाएगा जब तक साबित कदाचार या असमर्थता के आधार पर ऐसे हटाए जाने के लिए संसद् के प्रत्येक सदन द्वारा अपनी कुल सदस्य संख्या के बहुमत द्वारा तथा उपस्थित और मत देने वाले सदस्यों के कम से कम दो–तिहाई बहुमत द्वारा समर्थित समावेदन राष्ट्रपति के समक्ष उसी सत्र में रखे जाने पर राष्ट्रपति ने आदेश नहीं दे दिया है।[37]

बार को संबोधित करते हुए,[38] पूर्व सी0जे0आई0 **श्री एस0पी0 भरूचा** ने कहा कि देश में 80% से अधिक न्यायाधीश निष्पक्ष और ईमानदार हैं और न्यायाधीशों का छोटा प्रतिशत भाग न्यायपालिका को बदनाम कर रहा है। निचली अदालतों के न्यायाधीशों की जॉच और बर्खास्तगी आसान थी क्योंकि शक्तियॉ उच्च

[33] In Re Arundhati Roy (2002) 2 SCALE 537
[34] EMS Namboordiripad v. Nambiar (1970) 2 SCC 325-333
[35] The Hon. Sir Gerard Brennan, The State of the Judicature, (1998) 72 ALJ 33 at 40
[36] Ibid.
[37] Constitution of India, Article 124(4)
[38] 2002 (2) SCALE J-1

eISSN 2581-8996
ONLINE
THE INTERNATIONAL JOURNAL OF ADVANCED RESEARCH IN MULTIDISCIPLINARY SCIENCES (IJARMS)
A BI-ANNUAL, OPEN ACCESS, PEER REVIEWED (REFEREED) JOURNAL
Vol. 06, Issue 02, July 2023

न्यायालयों के पास थीं। हालॉकि, कठिनाई तब उत्पन्न होती है जब उच्च न्यायपालिका के न्यायाधीश भ्रष्ट होते हैं और जैसा कि उदाहरणों से पता चलता है, ज्यादातर मामलों में राजनीतिक कारणों से उनका महाभियोग विफल हो जाता है। **जस्टिस भरूचा 1993** में सर्वोच्च न्यायालय के न्यायाधीश **न्यायमूर्ति वी0 रामास्वामी** को हटाने के एकमात्र मामले का जिक्र कर रहे थे। न्यायाधीश जांच अधिनियम 1968 के तहत गठित वरिष्ठ न्यायाधीशों की एक समिति ने न्यायाधीश को सार्वजनिक सम्पत्ति के दुरूपयोग और दुरूपयोग में कदाचार का दोषी पाया, लेकिन संसद मे उन्हें हटाने का प्रस्ताव विफल हो गया क्योंकि सत्तारूढ़ दल ने उन्हें हटाने के लिए मतदान में भाग नहीं लिया। न्यायाधीश द्वारा इन चुनौतियों में से एक में उच्चतम न्यायालय की अपेक्षा यह थीः

"संसद संवैधानिक योजना में अपने दायित्वों का उतनी ही जिम्मेदारी और गम्भीरता के साथ निर्वहन करेगी, जितनी किसी न्यायाधीश को हटाने की प्रक्रिया में शामिल राज्य के किसी अन्य अंग या प्राधिकरण से अपेक्षि थी।"[39]

आपराधिक आचरण के निराधार मुकदमों से न्यायपालिका की स्वतन्त्रा की रक्षा करते हुए, सर्वोच्च न्यायालय ने आपराधिक अधिकारियों को किसी वरिष्ठ न्यायालय के न्यायाधीश के खिलाफ आपराधिक मामला दर्ज करने से रोक दिया है, जब तक कि इस मामले में भारत के मुख्य न्यायाधीश से परामर्श नहीं किया जाता है और यदि भारत के मुख्य न्यायाधीश का यह मानना है कि यह अधिनियम के तहत कार्यवाही के लिए उपयुक्त मामला नहीं है, मामला दर्ज नहीं किया गया है।[40]

एक न्यायाधीश को हटाने के लिए किसी प्रभावी उपाय के अभाव में, एक उच्च न्यायालय की बार ने चार न्यायाधीशों को अनुशासित करने के अपरम्परागत तरीके का सहारा लेते हुए उनके खिलाफ इस्तीफा देने का प्रस्ताव पारित किया और उच्च न्यायालय के मुख्य न्यायाधीश से उन्हें काम न देना अनुरोध किया। बार द्वारा अपनाए गए ऐसे तरीकों को सुप्रीम कोर्ट ने अधिकार क्षेत्र से बाहर माना है क्योंकि उच्च न्यायालय के न्यायाधीशों को अनुशासित करने का एकमात्र तरीका अनुच्छेद 124 (4) में दिया गया है। इसी मामले मे उच्चतम न्यायालय ने स्वयं ही किसी न्यायाधीश के व्यवहार की जांच के लिए एक प्रक्रिया निर्धारित की, यदि बार को उसके खिलाफ कोई शिकायत हो। इस पद्धति के अनुसार, शिकायत सीजेआई के पास रखी जानी चाहिए जो अपने विवेक से न्यायाधीश को इस्तीफा देने की सलाह देगा या आवश्यक समझे जाने वाले न्यायाधीश के खिलाफ कार्रवाई शुरू कर सकता है। उच्चतम न्यायालय द्वारा सुझाई गई विधि की पारदर्शिता न होने और अव्यवहारिक होने के कारण आलोचना की जाती है।[41]

संविधान **"साबित कदाचार"** के लिए एक न्यायाधीश को हटाने का प्रावधान करता है। इसे परिभाषित नहीं किया गया है, कई बार न्यायाधीशों के आचरण के लिए जांच और अनुशासन की कावश्यकता होती है ताकि उनके विचलित व्यवहार को दुर्व्यवहार की श्रेणी न रखा जाए। ऐसे विकृत व्यवहार में जिसकी भूमिका हो उसे अनुशासित करने की कोई मशीनरी नहीं है। अंत में, न्यायिक आचरण के बैंगलोर सिद्धान्तों की प्रस्तावना में उल्लिखित पंक्तियों पर विचार करते हैं: **"निम्नलिखित सिद्धान्तों का उद्देश्य न्यायाधीशों के नैतिक आचरण के लिए मानक स्थापित करना है। इन्हें न्यायाधीशों को मार्गदर्शन प्रदान करने और न्यायपालिका को न्यायिक आचरण को विनियमित करने के लिए एक ढ़ाचा प्रदान करने के लिए डिज़ाइन**

[39] Sarojini Ramaswami v. Union (1992) 4 SCC 506, 553
[40] K.Veeraswami v. Union of India (1991) 3 SCC 655
[41] Ravindran Iyer v. J.S.Bhatacharji (1995) 5 SCC 457

eISSN 2581-8996
ONLINE
THE INTERNATIONAL JOURNAL OF ADVANCED RESEARCH IN MULTIDISCIPLINARY SCIENCES (IJARMS)
A BI-ANNUAL, OPEN ACCESS, PEER REVIEWED (REFEREED) JOURNAL
Vol. 06, Issue 02, July 2023

किया गया है। उनका उद्देश्य न्यायपालिका को बेहतर ढ़ंग से समझने और उसका समर्थन करने के लिए कार्यपालिका और विधायिका के सदस्यों, अधिवक्ताओं और सामान्य रूप से जनता की सहायता करना भी है। ये सिद्धान्त मानते हैं कि न्यायाधीशों की स्थापना न्यायिक मानकों को बनाए रखने के लिए की गई है, जो स्वयं स्वतन्त्र और निष्पक्ष हैं, और उनका उद्देश्य कानून और आचरण के मौजूदा नियमों को पूरक करना है न कि उनका अपमान करना जो न्यायाधीश को बांधते है।"[42]

निष्कर्ष:

जहॉ तक न्यायपालिका की संस्था का संबंध है, न्यायपालिका की स्वतन्त्रता, जैसा कि उपरोक्त चर्चा से स्पष्ट है, एक प्रमुख स्थान रखती है। ऐतिहासिक विहंगावलोकन से स्पष्ट है कि अतीत में न्यायिक स्वतन्त्रता को अनेक बाधाओं का सामना करना पड़ा है, विशेष रूप से न्यायाधीशों की नियुक्ति और स्थानान्तरण के संबंध में। न्यायालयों ने हमेशा न्यायपालिका की स्वतन्त्रता को बनाए रखने की कोशिश की है और हमेशा कहा है कि न्यायपालिका की स्वतन्त्रता संविधान का आधारभूत ढ़ॉचा है। न्यायालयों ने ऐसा इसलिए कहा है क्योंकि न्यायपालिका की स्वतन्त्रता संविधान के सुचारू संचालन और विधि के शासन पर आधारित एक लोकतांत्रिक समाज की प्राप्ति के लिए पूर्व शर्त है। न्यायाधीशों के मामले में कार्यपालिका को प्रधानता देने की व्याख्या, जैसा कि शोधकर्ता ने चर्चा की है, ने भारत के मुख्य न्यायाधीश की राय के खिलाफ कम से कम कुछ न्यायाधीशों की नियुक्ति की है। न्यायाधीशों के मामलों का फैसला संविधान निर्माताओं द्वारा कभी नहीं किया जा सकता था क्योंकि वे हमेशा न्यायपालिका का कार्यपालिका से मुक्त रखने और इसे आत्मनिर्भर बनाने का कार्य निर्धारित करते थे। द्वितीय न्यायाधीशाों के मामले और तृतीय न्यायाधीशों के मामले का निर्णय इस संबंध में न्यायालय द्वारा एक सराहनीय कदम है।

किसी को यह महसूस करना चाहिए कि भारत जैसे देश में, नागरिक अपनी कई कठिनाइयों को हल करने के लिए न्यायपालिका पर भरोसा करते हैं, और इसलिए जवाबदेही के सुसंगत मानक जो भारतीय न्यायपालिका को यह ताकत देते है, अत्यंत महत्वपूर्ण हैं। उपरोक्त चर्चाओं का अन्तिम परिणाम यह है कि न्यायपालिका की स्वतन्त्रता के महत्व को संविधान निर्माताओं ने बहुत पहले ही समझ लिया था जिसे न्यायालयों ने भी संविधान की मूल विशेषता के रूप में चिन्हित करते हुए स्वीकार कर लिया है। यह सर्वविदित है कि बदलते समाज के बदलते आयाम को ध्यान रखते हुए उसी भावना से देखा जाना चाहिए। यह सुनिश्चित करने के लिए कि न्यायपालिका की संस्था की स्थापना का वास्तविक उद्देश्य प्राप्त हो जाए, न्यायिक जवाबदेही और न्यायिक स्वतन्त्रता को सहजीवी रूप से साथ–साथ काम करना होगा।

हमारे देश में उन लाखों लोगों की ओर से न्यायिक जवाबदेही की मांग बढ़ रही है जिनके मौलिक अधिकार सर्वोच्च न्यायालय और उच्च न्यायालयों द्वारा संरक्षित हैं। यह स्वीकार किया जाता है कि न्यायिक जवाबदेही की अवधारणा महत्वपूर्ण सार्वजनिक चिंता का विषय है, एक स्थिर समाज के लिए आवश्यक है और एक प्रॉस्पेक्टस समाज के लिए अपरिहार्य है।

[42] The Bangalore Draft Code of Judicial Conduct 2001 adopted by the Judicial Group on Strengthening Judicial Integrity, as revised at the Round Table Meeting of Chief Justices held at the Peace Palace, The Hague, November 25-26, 2002

eISSN 2581-8996
ONLINE
THE INTERNATIONAL JOURNAL OF ADVANCED RESEARCH IN MULTIDISCIPLINARY SCIENCES (IJARMS)
A BI-ANNUAL, OPEN ACCESS, PEER REVIEWED (REFEREED) JOURNAL
Vol. 06, Issue 02, July 2023

संदर्भ सूत्रः–

1- Shah A.P., A Manifesto for judicial Accountability in India, https://thewire.in/law/cji-ranjangogoisupreme-court-judiciary
2- Agarwal Yash, The Judicial Standards and Accountability bill needs Careful Consideration, Nov.16 2020. https://www.theleaflet.in/the-judicial-standards-and-accountability-bill-needs-carefulconsideration/#:~:text=The%20JSA%20Bill%20was%20passed,at%20least%20formally%2C%20ever %20since
3- Bandey,न्यायपालिका की स्वतन्त्रता, June 04, 2021. https://www.scotbuzz.org/2018/05/nyayapalika-kisvatantrata.html
4- Lorne Neudorf, Judicial Independence: The Judge as a Third Party to the Dispute https://ouclf.law.ox.ac.uk/judicial-independence-the-judge-as-a-third-party-to-the-dispute/
5- M. P. Singh, Professor of Law, University of Delhi, India. https://mckinneylaw.iu.edu/iiclr/pdf/vol10p245.pdf
6- Arghya Sengupta, Feb. 19, 2015, https://ohrh.law.ox.ac.uk/the-challenges-for-judicial-appointments-inindia/
7- By SANDIPAN DEB, 05/12/2021https://www.moneycontrol.com/news/trends/features/44million-pending-court-cases-how-did-we-get-here-7792511.html
8- न्यायपालिका की स्वतन्त्रता का सिद्धांत https://www.drishtiias.com/hindi/daily-updates/daily-newsanalysis/principle-of-independence-of-the-judiciary
9- JUDICIAL ACCOUNTABILITY AND JUDICIAL INDEPENDENCE, https://www.iilsindia.com/study-material/282965_1585287833.pdf
10- Principle of Independence of the Judiciary (https://www.drishtiias.com/hindi/daily-updates/daily-newsanalysis/principle-of-independence-of-the-judiciary)